# आधुनिक कालीन रागांग राग वर्गीकरण पद्धति अधिक उपयोगी अथवा थाट राग वर्गीकरण पद्धति?

**डॉ0 शुचि तिवारी**

*असि0 प्रोफे0 (अतिथि), संगीत विभाग,*

*इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद*

*Email: shuchitiwari1997@gmail.com*

Reference to this paper should be made as follows:

**डॉ0 शुचि तिवार्री,**

*आधुनिक कालीन रागांग राग वर्गीकरण पद्धति अधिक उपयोगी अथवा थाट राग वर्गीकरण पद्धति?*

Artistic Narration 2019, Vol. X, pp.80-89

http:// artistic.anubooks.com/

***सारांश***

*प्रस्तुत शोध पत्र में वर्तमान काल में प्रचलित रागांग राग वर्गीकरण पद्धति एवं थाट राग वर्गीकरण पद्धति का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है तथा दोनों पद्धतियों के गुणों तथा कमियों का वर्णन किया गया है।*

*शोध पत्र के माध्यम से यह प्रश्न भी उठाने का प्रयास किया गया है विद्यार्थियों को अथवा संगीत जनों को संगीत शिक्षा किस वर्गीकरण के आधार पर दी जाए क्योंकि प्राथमिक ज्ञान के लिए तो थाट राग वर्गीकरण उचित है परन्तु उच्च शिक्षा के लिए रागांग राग वर्गीकरण ही उपयोगी है।*

***मुख्य बिन्दु***

*रागों की संख्या में निरन्तर वृद्धि के कारण थाट वर्गीकरण उसको पूर्ण कर पाने में असमर्थ है, यद्यपि रागांग पद्धति भी पूर्णता को प्राप्त करने में असमर्थ है। परन्तु नवीन रागों का 10 थाट के अन्दर समावेश न हो पाने के कारण रागांग पद्धति ही अपनी उपयोगिता सिद्ध कर रही है। रागांग पद्धति के अन्दर ऐसे नवीन रागों का समावेश अपने अन्दर सम्भव है, जो थाट पद्धति में अपना स्थान प्राप्त नहीं कर सके हैं।*

*ऐसे में यदि संख्या बढ़ाने पर विचार किया जाये तो थाट राग पद्धति जटिल हो जाएगी। इस वर्तमान युग के लिए रागांग राग वर्गीकरण ही उपयुक्त है क्योंकि यह न तो मेल वर्गीकरण की तरह संख्या में बहुत अधिक हैं, न ही थाट राग वर्गीकरण की तरह संख्या में बहुत कम जिसमें नवीन रागें समाहित ही न हो सकें और दो रागों का सम्मिश्रण होने की अवस्था में राग में जिस राग का अंग अधिक होगा उसे उसी राग का रागांग स्वीकार करना चाहिए।*

***शोध प्रविधि***

*प्रस्तुत शोध पत्र में शोध प्रविधि के तुलनात्मक शोध प्ररचना का प्रयोग किया गया है। तुलनात्मक अनुसंन्धान में विषयगत शास्त्रीय पद्धति में से शोध समस्या हेतु प्रासंगिक मापकों के अंतर्दृष्टि से प्रस्तुत (दो या अधिक) तथ्यों का अवलोकन करते है। अवलोकन के परिणामों को संकलित कर वर्गीकृत किया जाता है। और सम्बन्धित मापदण्डों के आधार पर निष्कर्ष निगमित किया जाता है।*

## प्रस्तावना

रागों की संख्या में निरन्तर वषद्धि के कारण थाट वर्गीकरण उसको पूर्ण कर पाने में असमर्थ है, यद्यपि रागांग पद्धति भी पूर्णता को प्राप्त करने में असमर्थ है। परन्तु नवीन रागों का 10 थाट के अन्दर समावेश न हो पाने के कारण रागांग पद्धति ही अपनी उपयोगिता सिद्ध कर रही है। रागांग पद्धति के अन्दर ऐसे नवीन रागों का समावेश अपने अन्दर सम्भव है, जो थाट पद्धति में अपना स्थान प्राप्त नहीं कर सके हैं।

ऐसे में यदि संख्या बढ़ाने पर विचार किया जाये तो थाट राग पद्धति जटिल हो जाएगी। इस वर्तमान युग के लिए रागांग राग वर्गीकरण ही उपयुक्त है क्योंकि यह न तो मेल वर्गीकरण की तरह संख्या में बहुत अधिक हैं, न ही थाट राग वर्गीकरण की तरह संख्या में बहुत कम जिसमें नवीन रागें समाहित ही न हो सकें और दो रागों का सम्मिश्रण होने की अवस्था में राग में जिस राग का अंग अधिक होगा उसे उसी राग का रागांग स्वीकार करना चाहिए।

प्रस्तुत शोध पत्र में शोध प्रविधि के तुलनात्मक शोध प्ररचना का प्रयोग किया गया है। तुलनात्मक अनुसंन्धान में विषयगत शास्त्रीय पद्धति में से शोध समस्या हेतु प्रासंगिक मापकों के अंतर्दृष्टि से प्रस्तुत (दो या अधिक) तथ्यों का अवलोकन करते है। अवलोकन के परिणामों को संकलित कर वर्गीकृत किया जाता है। और सम्बन्धित मापदण्डों के आधार पर निष्कर्ष निगमित किया जाता है।

भातखण्डे की थाट पद्धति ही आधुनिक काल में प्रचलित है। पं0 भातखण्डे ने वर्गीकरण पद्धति को सरल बनाने के लिए स्वर साम्यता के आधार पर समस्त प्रचलित रागों को 10 थाटों में बाँटा। किन्तु अत्यधिक सरल बनने के प्रयास में थाट संख्या बहुत कम हो गई। इस कारण नये रागों का समावेश इनमें न हो सका। ललित राग का उदाहरण ले सकते हैं। ललित में दोनों मध्यम लगते हैं ललित में शुद्ध मध यम वादी स्वर है तथा यह मारवा थाट के अंतर्गत आता है जिसमें शुद्ध मध्यम लगता ही नहीं। इसी प्रकार वर्तमान प्रचलित राग मधुवंती, अहीर भैरव, पटदीप, चंदकौंस आदि रागों का समावेश 10 थाट पद्धति के अंतर्गत नहीं हो सकता।

इसी समस्या के समाधान हेतु श्री नारायण मोरेश्वर खरे जी ने प्रचलित रागों के अंगभूत टुकड़ों को चुना अथवा ऐसे प्रचलित रागों को खोजा गया जिनसे अन्य रागों का साम्य हों सके। इस प्रकार के रागों को एक वर्ग में रखकर ''रागांग'' संज्ञा से सम्मानित किया गया तथा ऐसे रागांगों की संख्या तीस

मानी गई। इन्हीं रागांगों के राग वाचक स्वरों के आधार पर अन्य रागों के गायन–वादन का विधान ही इस वर्गीकरण की प्रमुख विशेषता है।

## तथ्य

आधुनिक काल में रागांग राग वर्गीकरण पद्धति ऊपर उठकर आयी है। वैसे अभी भी थाट राग वर्गीकरण पद्धति ही प्रचार में हैं क्योंकि विद्यार्थियों को इसी पद्धति से शिक्षा दी जाती है परन्तु विद्वत्जनों द्वारा रागांग पद्धति को वरीयता दी जा रही है। थाट वर्गीकरण स्वर साम्य पर आधारित है तो रागांग वर्गीकरण स्वरूप साम्य पर।

जिस प्रकार थाट राग वर्गीकरण में नवीन रागों का समावेश नहीं हो पाता है ऐसी समस्या रागांग राग वर्गीकरण के साथ नहीं है क्योंकि कोई भी राग किसी न किसी अंग के अंतर्गत समाहित हो ही जाता है।

हम नव प्रचलित राग मधुवंती, अहीर भैरव, पटदीप, चंद्रकौस का उहारण ले सकते हैं क्योंकि ये नव प्रचलित राग 10 थाट राग वर्गीकरण के अंतर्गत समाहित नहीं हो पाता है। जब कि किसी न किसी अंग में अवश्य समाहित हो जाता है।

## तथ्य विश्लेषण

### रागांग राग वर्गीकरण–

रागांग शब्द की उत्पत्ति के लिए यदि सर्वप्रथम पं0 शारंगदेव रचित संगीत रत्नाकर का आश्रय लें तो हम पाते हैं कि देशी रागान्तर्गत वर्गीकरण में जिन रागों में ग्रामोक्त रागों की छाया होती थी इनके लिए रागांग शब्द प्रयोग हुआ है किन्तु ऐसा विदित होता है कि उससे पूर्व मतंग ने भी अपने समय में प्रचलित रागों के वर्गीकरण का प्रयत्न किया और इसी समय प्रथम बार ''रागांग'' शब्द का प्रयोग हुआ।

रागांग की परिभाषा पं0 दामोदर ने इस प्रकार की है– ''रागांग राग वे हैं जिनमें ग्राम राग की कुछ छाया मिले।''[1] कल्लिनाथ के अनुसार–''रागांग राग वे हैं, जिसमें ग्राम रागों की छाया हो।''[2] इससे कल्पना की जा सकती है कि एक मुख्य राग की छाया (किसी विशेष स्वर समुदाय द्वारा) भिन्न–भिन्न रागों में उपस्थित हो, तब उसे राग का रागांग कहा जाता होगा।

"Among the medieval Sanskrit authors on music, bhavabhatta is credited with giving a methodical clarification of rages according to ragang and be called it bheda"[3]

रागांग वर्गीकरण का प्रभाव मेल सिद्धान्त के अंतर्गत रागों को वर्गीकष्त किये जाने के पश्चात् भी दिखायी देता है। पं0 भातखण्डे एक मेल के अन्तर्गत अनेक रागांगो का समावेश करते हैं। उदाहरणार्थ काफी मेल के अंतर्गत उन्होंने काफी अंग, धनाश्री, अंग, कान्हड़ा अंग, सारंग अंग, मल्हार अंग के रागों के का स्पष्ट उल्लेख करते हुए समावेश किया। मेल राग वर्गीकरण पद्धति में भी इस वर्गीकरण का प्रबल प्रभाव इस वर्गीकरण की सशक्तता, अनिवार्यता एवं आवश्यकता का प्रतिपादक है। इस प्रबलता का मुख्य कारण यही है कि राग की सामान्य पहिचान तो स्वरों के द्वारा हो जाती है परन्तु सूक्ष्म पहिचान विशिष्ट स्वर समूहों के माध्यम से ही होती है। यही स्वर समूह प्रधान पहिचान 'रागांग' कहलाती है।

आधुनिक काल में हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति में रागांग वर्गीकरण को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है, कुछ आधुनिक विद्वान जैसे कष्ष्णधन बनर्जी तथा एस0 एस0 टैगोर ने भी इस पद्धति के महत्व को समझाया है।

रागांगों के आधार पर ही समान स्वर वाले रागों को पष्थक् पहचाना जा सकता है। (हिन्दुस्तानी संगीत में एक ही सप्तक से एक से अधिक रागों की उत्पत्ति होती है, जैसे भूपाली, देशकार, जैत कल्याण तथा शुद्ध कल्याण आदि। इन सभी में सा रे ग प ध स्वरावली प्रयुक्त होती है, किन्तु केवल रागांगों की सहायता से ही इन रागों को पष्थक् गाया बजाया जा सकता है। इस प्रकार अन्य कई समान स्वर के राग हैं, जिन्हें रागांगों से पष्थक् किया जाता है।

डॉ0 जतिन्द्र सिंह खन्ना के अनुसार रागों का एक अंग हो सकता है किन्तु कुछ रागों का अंग एक प्रधान अंग के रूप में स्थापित हो चुका है और इस राग के साथ नाम तथा स्वरों की दषष्टि से कुछ अन्य राग भी जुड़ गए हैं, जैसे एक राग मियाँ की तोड़ी है। इसके प्रधान अंग को तोड़ी अंग कहते हैं। यह राग की चलन तथा स्वर विस्तार से सम्बन्धित हैं। इसका प्रयोग जब भी कही होगा तो उसमें तोड़ी शब्द का प्रयोग होगा या तोड़ी अंग लगाया जायेगा। जैसे गुर्जरी तोड़ी में तोड़ी शब्द भी आया है तथा तोड़ी के स्वर भी सम्मिलित हैं। इसी प्रकार विलासखानी तोड़ी में स्वर तो राग भैरवी के हैं परन्तु इसकी चलन तोड़ी के समान है। इसलिए यह तोड़ी का प्रकार है।[6]

भातखण्डे की थाट पद्धति ही आधुनिक काल में प्रचलित है। पं0 भातखण्डे ने वर्गीकरण पद्धति को सरल बनाने के लिए स्वर साम्यता के आधार पर समस्त प्रचलित रागों को 10 थाटों में बाँटा। किन्तु

अत्यधिक सरल बनने के प्रयास में थाट संख्या बहुत कम हो गई। इस कारण नये रागों का समावेश इनमें न हो सका। ललित राग का उदाहरण ले सकते हैं। ललित में दोनों मध्यम लगते हैं ललित में शुद्ध मध्यम वादी स्वर है तथा यह मारवा थाट के अंतर्गत आता है जिसमें शुद्ध मध्यम लगता ही नहीं। इसी प्रकार वर्तमान प्रचलित राग मधुवंती, अहीर भैरव, पटदीप, चंदकौंस आदि रागों का समावेश 10 थाट पद्धति के अंतर्गत नहीं हो सकता।[7]

रागांग राग वर्गीकरण पद्धति ही आधुनिक काल के उपयुक्त मानी जाती हैं किन्तु इस पद्धति का प्रारम्भ प्राचीन काल में ही हो गया था। शारंगदेव के काल में रागांग पद्धति को विशेष उत्थान प्राप्त हुआ। परन्तु उस समय की रागांग पद्धति तथा आधुनिक रागांग पद्धति में बहुत अन्तर है।

प्राचीनकाल से लेकर आधुनिक काल तक रागांग वर्गीकरण भारतीय संगीत में अपने निम्नलिखित गुणों के कारण बरकरार रहा–

1 रागों का वास्तविक स्वरूप रागांग द्वारा ही व्यक्त होता है क्योंकि इस पद्धति में न केवल रागों में प्रयुक्त कोमल तथा तीव्र स्वर बताये जाते हैं बल्कि रागों में प्रयुक्त होने वाले स्वर समुदाय का भी उल्लेख रहता है।

2 किसी भी राग का सम्बन्ध किसी प्राचीन एवं सिद्ध राग से स्थापित हो जाता है।

3 जिस प्रकार थाट राग वर्गीकरण में नवीन रागों का समावेश नहीं हो पाता है ऐसी समस्या रागांग राग वर्गीकरण के साथ नहीं है क्योंकि कोई भी राग किसी न किसी अंग के अंतर्गत समाहित हो ही जाता है।

हम नव प्रचलित राग मधुवंती, अहीर भैरव, पटदीप, चंद्रकौस का उहारण ले सकते हैं क्योंकि ये नव प्रचलित राग 10 थाट राग वर्गीकरण के अंतर्गत समाहित नहीं हो पाता है। जब कि किसी न किसी अंग में अवश्य समाहित हो जाता है।

4 रागांग राग वर्गीकरण के अंतर्गत प्राचीन एवं सिद्ध राग शुद्ध राग होते हैं तथा रागांग राग छायालग राग होते हैं। आज नवीन रागों को वो स्थान प्राप्त नहीं हैं जो प्राचीन व सिद्ध रागों को है। समय के साथ नवीन रागों को भी प्राचीन रागों के समान स्थान प्राप्त हो सकता है। किन्तु यह राग बहुत अधिक नहीं होगें इसलिए इस पद्धति के अंतर्गत प्राचीन तथा छायालग रागों को एक स्तर पर नहीं रखा गया है।

छायालग रागों को प्राचीन रागों का रागांग कहते हैं जिससे स्पष्ट होता हैं कि प्राचीन रागों को छायालग अथवा रागांग रागों से उच्च स्थान प्राप्त होता हैं।

इन सभी विशेषताओं के होने पर भी यह पद्धति प्रचलित न हो सकीं रागांग राग वर्गीकरण स्वरूप साम्य पर बल देने से कुछ समस्याएं उत्पन्न हुई। जैसे पूरिया कल्याण को किस तरह का राग माना जाए। प्रश्न उठता है कि क्या पूरिया धनाश्री में शुद्ध ध लगाने से वो तैयार हो गया? अथवा यमन में कोमल रिषभ (रे) लगाने से वो तैयार हो जाएगा। पूर्वांग अथवा उत्तरांग में पूरिया अधिक रखा जा सकता है अथवा कल्याण, अथवा दोनों में समान मात्रा दिखायी जा सकती है। इस प्रकार दोनों राग एक हो जाने पर वो अंग कौन सा होगा, कल्याण या मारवा? इस प्रकार नये राग बढ़ाने से रागांग भी बढ़ाने चाहिए।

रागांग राग वर्गीकरण में निम्नलिखित कमियाँ दिखायी पड़ती हैं–

1 मध्यकाल में शारंगदेव ने रागांग पद्धति की कोई पूर्ण सुव्यवस्थित ऐसी व्यवस्था नहीं की थी जिससे अनेक उत्पन्न होने वाले भ्रम दूर हो सकें।

2 स्वरूप साम्य के आधार पर वर्गीकरण होने के कारण कई ऐसे राग हैं जिनमें एक से अधिक रागों का समावेश है तथा किसी वर्ग में न आ सकने के कारण वे वर्गविहीन रह जाते हैं।

3 रागांग पद्धति में स्वर साम्य तथा स्वरूप साम्य के संतुलन का अभाव हैं।

4 थाट राग वर्गीकरण मान्य 10 थाट होने से रागांग के 30 वर्ग संख्या में अधिक लगने लगे हैं। अतः रागों के वर्गीकरण में भी कठिनाई दिखायी पड़ती है।

आधुनिक काल में रागांग राग वर्गीकरण पद्धति ऊपर उठकर आयी है। वैसे अभी भी थाट राग वर्गीकरण पद्धति ही प्रचार में हैं क्योंकि विद्यार्थियों को इसी पद्धति से शिक्षा दी जाती है परन्तु विद्वत्जनों द्वारा रागांग पद्धति को वरीयता दी जा रही है। थाट वर्गीकरण स्वर साम्य पर आधारित है तो रागांग वर्गीकरण स्वरूप साम्य पर।

**थाट राग वर्गीकरण–**

आधुनिक काल में थाट राग वर्गीकरण को मान्यता हैं। मध्यकाल में जो मेल पद्धति प्रचलित थी, यह उसी का प्रतिरूप है। मेल शब्द को आधुनिक काल में थाट कहा जाता है।

भातखण्डे जी राग–रागिनी पद्धति व मेल पद्धति से संतुष्ट नहीं थे अतः उन्होंने थाट राग पद्धति का विकास किया। इसमें उन्होंने स्वर साम्य पर अधिक बल दिया है। उन्होंने व्यंकटमुखी के 72 थाटों में से 10 थाटों को चुनकर भारतीय रागों को इन थाटों में विभाजित किया। ये 10 थाट हैं–

(1) विलावल (2) कल्याण (3) खमाज (4) काफी (5) मारवा (6) पूर्वी (7) भैरवी (8) भैरव (9) तोड़ी (10) आसावरी। इन थाटों के अंतर्गत ही भारतीय रागों का विभाजन हुआ। थाट के लिए बताया गया है कि स्वरों की वह रचना है, जिससे राग उत्पत्र हो सके।

''मेल स्वरसमूहः स्थाद्रागव्यंजन शक्तिमान्।

श्लिष्टच्चरणमेवाल समुदायः प्रकीर्तितः।।''[4]

अर्थात् मेल उस स्वर समूह को कहते हैं। जिसमें राग उत्पन्न करने की शक्ति हो, यहाँ स्वर समूह से केवल अभिप्राय है कि क्रम से एक के बाद एक दूसरे स्वर उच्चारित किये जाए।[5]

इस वर्गीकरण का आधार न केवल दक्षिण में बल्कि उत्तर में 'राग तरंगिणी' 'राग विबोध' 'हृदय कौतुक' और हृदय प्रकाश जैसे ग्रन्थों में उपलब्ध है।

इस पद्धति के अनुसार थाटजनक माना जाता है तथा राग जन्य, इसीलिए इसे जनक जन्य पद्धति कहा जाता है।

थाट राग पद्धति के विषय के विषय में कुछ लोग भी मानते हैं कि इस पद्धति के आविष्कारक भातखण्डे जी न होकर कोई अन्य व्यक्ति है। किन्तु इस पद्धति के आविष्कारक जो कोई भी रहे हों इसका प्रचार तो पं0 भातखण्डे जी ने ही किया अतः इस पद्धति के बारे में जनमानस को पता चला व प्रचार हुआ और आज समस्त उत्तर भारत में इस पद्धति के बारे में जनमानस को पता चला व प्रचार हुआ और आज समस्त उत्तर भारत में इस पद्धति का प्रचलन है, किन्तु इस पद्धति में भी कुछ कमियाँ दिखाई देती हैं अर्थात् यह पद्धति अपने में पूर्ण नहीं है।

भातखण्डे जी ने स्वर साम्य पर जोर देते हुए जो वर्गीकरण किया। उसका स्वरूप इस प्रकार है–

**थाट स्वरूप–**

1 बिलावल– सा, रे, ग, म, प, ध, नी।

2 कल्याण– सा, रे, ग, म, प, ध, नी।

3 खमाज– सा, रे, ग, म, ध, नी।

4 काफी– सा, रे, ग, म, प, ध, नी।

5 मारवा– सा, रे, ग, म, प, ध, नी।

6 पूर्वी– सा, रे, ग, म, प, ध, नी।

7 आसावरी– सा, रे, ग, म, प, ध, नी।

8 भैरवी– सा, रे, ग, म, प, ध, नी।

9 भैरव– सा, रे, ग, म, प, ध, नी।

10 तोड़ी– सा, रे, ग, म, प, ध, नी।

इन थाटों के आधार पर ही रागों का विभाजन हुआ। इस पद्धति में एक ही स्वर के दो रूप स्पष्ट नहीं किये गये। कुछ विद्धानों का कहना है कि थाटों की संख्या कम होने के कारण रागों का इस वर्ग में आना असम्भव सा प्रतीत होता है। कुछ रागों को जबरदस्ती ऐसे थाटों में रख दिया है, जिनसे वे साम्य ही नहीं रखते। जैसे मधुवंती राग, इसे तोड़ी थाट के अन्तर्गत रखा गया जबकि इसमें रे ध स्वर वर्जित है।

दूसरा ललित राग मारवा थाट से है, लेकिन इसमें दोनों मध्यमों का प्रयोग होता है। इसलिए यह राग इस थाट में भी नहीं मानना चाहिए। भातखण्डे जी की थाट पद्धति का आधार स्वर साम्य है।

थाट के आश्रय राग के मुख्य स्वरूप की छाया उनके अन्य रागों में होना आवश्यक है इसलिए यदि ललित के सभी स्वर मारवा में न हो तो भी स्वरूप साम्य की दर्षष्टि से इसे मारवा थाट के अन्तर्गत रखना पूर्णतया गलत नहीं कहा जा सकता फिर भी मधुवंती जैसे राग किसी भी थाट में नही रखे जा सकते।

इस प्रकार इस पद्धति में कुछ कमियाँ हैं, किन्तु राग वर्गीकरण की किसी स्वयं संपूर्ण पद्धति का अविष्कार अब तक न होने से थाट पद्धति का ग्रहण ही संगीतज्ञों के द्वारा होता है।

## निष्कर्ष

रागांग ही राग उत्पत्ति तथा राग वर्गीकरण का वैज्ञानिक तथा सैद्धान्तिक आधार है थाट नहीं किसी एक राग अथवा एकाधिक रागों के एक अथवा एकाधिक रागांग ही राग उत्पत्ति तथा राग वर्गीकरण का वैज्ञानिक तथा सैद्धान्तिक सहज सरल बोधगम्य आधार है, जिसे जानें बिना कोई अच्छा विद्यार्थी, अच्छा शिक्षक अथवा अच्छा कलाकार कदापि नहीं बन सकता। जिन्हें किसी एक अथवा एकाधिक रागों के अंग अथवा अंगों की जानकारी जितनी अधिक होगी वे उतना ही आत्मविश्वास के साथ राग गायन वादन प्रस्तुत कर सकते हैं। उन्हें यह ज्ञान होगा कि किसी मौलिक राग का मुख्य अंग कहाँ–कहाँ कैसे–कैसे प्रयोग करना है।

ध्यान रखना होगा कि दस अथवा दसाधिक जितना ही थाटों का क्यों न चर्वि–चर्वन किया जाये किन्तु जब तक रागांग अर्थात् किसी भी राग की राग परिचायक मूल स्वरसंगति अथवा संगीतियाँ ज्ञात न हो तब तक कोई भी राग शत प्रतिशत शास्त्र शुद्ध रूप से गाना सम्भव नही होगा। और न ही उसे और–और मौलिक अथवा समप्राकृतिक रागों से बचाया जा सकेगा।

राग गायन वादन के लिए हमें जानने की आवश्यकता है, रागांगों की, थाट की नहीं। तोड़ी अंग के बिना, तोड़ी अंग के राग भूपालतोड़ी, गुर्जरी तोड़ी, विलासरवानी तोड़ी, वैरागी तोड़ी आदि राग, तोड़ी थाट से, सारंग अंग के बिना, सारंग अंग के राग वष्दावनी, मधमाद, शुद्ध सारंग, सामंत सारांग आदि राग काफी थाट से अथवा कान्हड़ा अंग के बिना, कान्हड़ा, कान्हणा अंग के रंग दरबारी, अड़ाना, नायकी, सुहा आदि राग आसावंरी थाट से गायाबजाया जाना बिल्कुल सम्भव नहीं।

रागांग वर्गीकरण पद्धति कोरी कल्पना पर आधारित नहीं है एवं राग इसके जुड़ाव भी महसूस करते हैं, जब कि थाट एवं राग में कोई भी साम्यता एवं जुड़ाव महसूस नहीं होता बल्कि

लगता है कि थाट को जबरदस्ती रागों के साथ जोड़ा गया है। थाट वर्गीकरण पद्धति प्रचारित होने के बाद भी लोग रागांग वर्गीकरण पद्धति को भूल नहीं पाये हैं यह इस पद्धति के उपयोगी होने का ही प्रमाण है।

## संदर्भ ग्रन्थ


1 संगीत बोध–पृ0 **65**

2 सं0 र0, खं0 2, पृ0 **18**

3 सं0 र0 द्वि0 म0 कल्लि, पृ0 **15**

4 राग तत्व विबोध, पृ0 **9** श्लोक 91, मेल लक्षणम् प्रकरण

5 वही पृ0 **251**

6 डॉ0 जतिन्द्र सिंह खन्ना, संगीत की परिभाषित शब्दावली, पृ0 **12**

7 भातखण्डे, भातखण्डे संगीत पाठशाला, भाग 1, 1958, पृ0 **35**